भगवान् शंकराचार्य और विवेक चूडामणि

काशी में रहते समय शंकराचार्य ने वहाँ रहने वाले प्राय : सभी विरुद्ध मत वालों को परास्त कर दिया। वहाँ से कुरुक्षेत्र होते हुए वे बदरिकाश्रम गए। वहाँ कुछ दिन रहकर उन्हों ने कुछ और ग्रन्थ लिखे। जो ग्रन्थ उनके मिलते हैं, प्राय : सबको उन्होंने काशी अथवा बदरिकाश्रम में लिखा। 12 वर्ष से 16 वर्ष तक की अवस्था में उन्होंने सारे ग्रन्थ लिख डाले। बदरिकाश्रम से चलकर शंकर प्रयाग आये और यहाँ कुमारिलभट्ट से उनकी भेंट हुई। कुमारिलभट्ट के कथनानुसार वे प्रयाग से माहिष्मती (महेश्वर) नगरी में मंडनमिश्र के पास शास्त्रार्थ के लिए आये। यहाँ मंडनमिश्र के घर का दरवाजा बन्द होने के कारण योगबल से वे आँगन में चले गए, जहां मंडनमिश्र श्राद्ध कर रहे थे , शास्त्रार्थ करने के लिए कहा।

उस शास्त्रार्थ में मध्यस्थ बनायी गयीं मंडनमिश्र की विदुषी पत्नी भारती। अंत में मंडनमिश्र की पराजय हुई और उन्होंने शंकाराचार्य का शिष्यत्व ग्रहण किया और ये ही आगे चलकर सुरेश्वराचार्य के नाम से प्रसिद्ध हुए। कहते हैं, भारती ने पति के हार जाने पर स्वयं शंकराचार्य से शास्त्रार्थ किया और कामशास्त्र-सम्बन्धी प्रश्न पूछे, जिसके लिए शंकराचार्य को योगबल से मृत राजा अमरुक के शरीर में प्रवेश कर कामशास्त्र की शिक्षा ग्रहण करनी पडी। पति के सन्यासी होजाने पर भारती ब्रह्मलोक को जाने को उद्यत हुई, परन्तु शंकराचार्य उन्हें समझा-बुझाकर श्रृंगगिरि लिवा लाये और वहाँ रहकर अध्यापन का कार्य करने की प्रार्थना की। कहते हैं, भारती द्वारा शिक्षा प्राप्त करने के कारण श्रृंगेरी और द्वारका के शारदा मठों का शिष्य-सम्प्रदाय “भारती” के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

मध्यभारत पर विजय प्राप्त कर शंकराचार्य दक्षिण की ओर चले और महाराष्ट्र में शैवों और कापालिकों को परास्त किया। एक धूर्त कापालिक तो उन्हींकी बलि चढाने के लिए छल से उनका शिष्य हो गया। परन्तु जब वह बलि चढाने कि लिए तैयार हुआ तो पद्मपादाचार्य ने उसे मार डाला। उस समय भी शंकराचार्य की साधना का अपूर्व प्रभाव देखा गया। कापालिक की तलवार की धार के नीचे वे समाधिस्थ और शांत बैठे रहे। वहाँ से चलकर दक्षिण में तुंगभद्रा के तट पर उन्होंने एक मन्दिर बनवाकर उसमें शारदादेवी की स्थापना की, यहाँ जो मठ स्थापित हुआ उसे श्रृंगेरी मठ कहते हैं। सुरेश्वराचार्य इसी मठ में आचार्य पद पर नियुक्त हुए। इन्हीं दिनों शंकराचार्य अपनी वृद्धा माता की मृत्यु समीप जानकर घर आये और माता की अन्त्येष्टी क्रिया की।

कहते हैं कि माता की इच्छा के अनुसार इन्होंने प्रार्थना करके उन्हें विष्णुलोक में भिजवाया। वहाँ से ये श्रृंगेरीमठ आये और वहाँ से पुरी आकर इन्होने गोवर्धन मठ की स्थापना की और पद्मपादाचार्य को उसका अधिपति नियुक्त किया। इन्होंने चोल और पांड्य देश के राजाओं की सहायता से दक्षिण के

शाक्त, गाणपत्य और कापालिक – सम्प्रदाय के अनाचार को दूर किया। इस प्रकार दक्षिण में सर्वत्र धर्म की पताका फहराकर और वेदान्त की महिमा घोषित कर ये पुन : उत्तर भारत के ओर मुड़े। रास्ते में कुछ दिन बरार में ठहर कर उज्जैन आये और वहाँ इन्होंने भैरवों की भीषण साधना को बन्द किया। वहाँ से ये गुजरात आये और द्वारका में एक मठ स्थापित कर अपने शिष्य हस्तामलकाचार्य को आचार्य पद पर नियुक्त किया। फिर गांगेय प्रदेश के पण्डितों को पराजित करते हुए कश्मीर के शारदाक्षेत्र पहुंचे तथा वहाँ के पण्डितों को परास्त कर अपना मत प्रतिष्ठित किया। फिर यहाँ से आचार्य आसाम के कामरूप आये और वहाँ के शैवों से शास्त्रार्थ किया यहाँ से फिर बदरिकाश्रम वापस आये और वहाँ ज्योतिर्मठ की स्थापना कर तोटकाचार्य को मठाधीश बनाया। वहाँ से ये केदारक्षेत्र आये और यहीं से कुछ दिनों बाद सीधे देवलोक चले चले गए।

गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित “विवेक चूडामणि”..हिन्दी अनुवाद सहित (कोड-133) पुस्तक से